सदश्व

कौन तुम, हम हैं तुरंगम श्रेष्ठ।
वेग में सब भूचरों में ज्येष्ठ।
देखता जो भी हमारी शक्ति।
उमड़ आती है स्वतः ही भक्ति।।1।।

शुभ्रता प्रतिमान है मम देह।
भव्यता भूषण विगत संदेह।
तुंगता ऐसी हमारी देख।
अन्य मन में खर्वता अतिरेक।।2।।

मैं सदा से शासकों की शक्ति।
विजय में जिनकी रही अनुरक्ति।
कौन मम साहाय्य बिन श्रीमान।
मानते लोहा सकल धीमान।।3।।

आदि से मम रत्नता स्वीकार्य।
विभव का मैं तत्व हूं अनिवार्य।
मिला महिमामंडितों से मान।
वीरवरगण का सुबंधु समान।।4।।

देखता रिपु वेग जब दुर्वार।
मान लेता बिना रण के हार।
याद आता देश मम काम्बोज।
विगतप्रभ होता हृदय अम्भोज।।5।।

मम अतुल जव से समुत्थित वात।
क्षिप्त कर अवरोध के संघात।
रेणु का कर गगन में उत्थान।
हरण करती तरणि का द्युति मान।।6।।

अन्यजनकृत उच्चता सुप्रयास।
कभी आ सकते मुझे क्या रास।
कोप का उठता तभी आवेग।
रेणु उत्थापक बनाता वेग।।7।।

सघन टापों का अमोघ प्रहार।
शत्रु पर लाता व्यथा का भार।
सह्य को भी सह्य क्या आघात।
कहां कटु प्रतिशोध में, व्याघात।।8।।

पति नहीं, तुम यहां वाहन मात्र।
त्वरा बस तुमको बनाती पात्र।
मात्र पहुंचाना तुम्हारा कार्य।
क्या पहुंचते तुम? यही सुविचार्य।।9।।

कौन है तव पृष्ठ पर आसीन?
नित बनाता लोक को जो दीन।
कौन करता नियत तव गंतव्य?
पूर्ण किसके कर रहे मंतव्य?।।10।।

वह, जिसे निज देह भी है भार।
जो न चल सकता चरण भी चार।
गहन अंतर में सदा जो भीत।
जगत में जो मात्र अपना मीत।।11।।

नित्य जो होता तुम्हीं से ऊढ़।
आशु होता शिखर पर आरूढ़।
भूयसी रच योजना, कर व्यूढ़।
इतर जन बहु योग रखता गूढ़।।12।।

गूंजता नभ में तुमुल जयघोष।
तुम्हें बस मिलता यही परितोष।
चणक पूरित रुचिर बहु हय खाद्य।
पेय पीते, श्रवण कर मृदु वाद्य।।13।।

तुम्हारा तो स्थान ही नेपथ्य।
मात्र आज्ञाकारिता तव पथ्य।
कंटकित भी पथ तुम्हें उत्क्राम्य।
स्वामि का साफल्य केवल काम्य।।14।।

तुम्हारा चिर शत्रु है श्रम खेद।
यहां तो बस श्लाघ्य है तव स्वेद।
नहीं जन को सह्य उन्नत भाल।
और हेषण उच्च, तुंग अयाल।।15।।

तुम्हारे सब चरण हैं कृत नाल।
सुवल्गित है आस्य सरद विशाल।
करो मत विस्मृत सुदीर्घ प्रतोद।
रश्मि क्या देती तुम्हें कुछ मोद।।16।।

ज़िसे भूषण समझकर कृत मान।
अरे यह काठी न कर अभिमान।
पृष्ठ पर तारक जड़ी जो झूल।
वही है तव दासता मत भूल।।17।।

उभयरद होते हुए रदहीन।
सगुणता तुमको बनाती दीन।
बिगुणता हित हत! तुम सन्नद्ध।
कामना के तंतु से आबद्ध।।18।।

स्वयं बाजीकरण अभिरत व्यक्ति।
देखकर उद्दाम तेरी शक्ति।
धृतअभयमुद्रा यदपि यह भीत।
तवाश्रित तो भी करे अवगीत।।19।।

अन्य इंगित नर्तकी तव बुद्धि।
विकल छिपती फिर रही अब शुद्धि।
मुक्त चिंतन विगत, परिमित हास्य।
कथंविधि स्वीकार्य तुमको दास्य।।20।।

धवलता सहती सभी कुछ मौन।
डालता है कृष्ण छाया कौन।
कौन नव कद्रुज करे यह कृत्य।
समझता तुमको लघीयस भृत्य।।21।।

निरंतर तव कुपथनय कुप्रयास।
असित अंतर कर रहा सायास।
कूट उसकी समझ लो हय युक्ति।
मात्र रजताभास, यह है शुक्ति।।22।।

करो मत मति का असत विनियोग।
वीत जाएंगे सकल दुर्योग।
इष्ट किसको बढ़ाना भवरोग।
त्याज्य वे जिनको अभीप्सित भोग।।23।।

नहीं ढोने हैं तुम्हें कृतपाप।
हो चुके जो लोक को अभिशाप।
दमन के साधन न हों तव पाद।
हो न भयप्रद तुम्हारा गुरु नाद।।24।

आत्म से इतना करो मत बैर।
उठाकर आकाश में दो पैर।
करो ह्रेषण उच्च गूंजे विश्व।
बनो फिर से कामचारी अश्व।।25।।

जब न रोके वेग रश्मि खिंचाव।
जब न बाधक बने चालक भाव।
लक्ष्य पर छाए न संशय धुंध।
द्वंद्व जब मति को न करता कुंद।।26।।

रजोत्थापक हो न चरणाघात।
हो न गर्वित मन, समझ अभिजात।
समर्थन जन का न होगा अल्प।
सुपथगंता बढ़ो कृत संकल्प।।27।।

सुन तुम्हारी दृढ़ सजव पदचाप।
जगे आशा दूर हो परिताप।
मिटे भय जन मन उदित विश्वास।
जानना मति शक्ति मेरे पास।।28।।

सुरासुररण मध्य कृत बहु यत्न।
बनाते उच्चैः श्रवा को रत्न।
शक्र का साहाय्य क्या सामान्य?
मात्र सिंधुजता न करती धन्य।।29।।

राष्ट्र गरिमा हेतु धृत सुप्रताप।
पुनः हों अवतरित वीर प्रताप।
धार चेतकता निभाना धर्म।
देशहित, सारी क्रिया का मर्म।।30।।

ज्ञान अभिलाषी मिले यदि नाथ।
छोड़ना साग्रह न उसका साथ।
लौट आया विवश छोड़ कुमार।
व्यथा कंथक की अमेय अपार।।31।।

करो सार्थक नाम तुम निज अश्व।
तजो आगत भय, कि नय सर्वस्व।
है यही, जो भूल जाता भूत।
वही करता विपुल अरि परिभूत।।32।।

हरितहय हय वंश के तुम जीव।
डाल दो आलोक की दृढ़ नींव।
सप्तसप्तिद रश्मि का संभार।
भूल अस्ताचल बसे साभार।।33।।

- शिवकुमार मिश्र
अपर महाप्रबंधक/प्रशासन

स्थानः जबलपुर
दिनांक 17.05.2014